अनुवाद

इसलिए हे महाबाहु ! जिसकी इन्द्रियाँ सब प्रकार से इन्द्रियविषयों से वश में की हुई हैं, उसी की बुद्धि निःसन्देह स्थिर है।।६८।।

तात्पर्य

जिस प्रकार श्रेष्ठ बल के द्वारा शत्रुमर्दन किया जाता है, वैसे ही इन्द्रियों का संयम मानवी चेष्टा से नहीं, अपितु उन्हें भगवत्सेवा में नियोजित करने से किया जा सकता है। जो व्यक्ति यह हृदयंगम कर लेता है कि कृष्णभावना के द्वारा ही बुद्धि स्थिर होती है, जिसके लिए प्रामाणिक गुरु के आदेशानुसार इस कला का अभ्यास करना चाहिए, वह साधक अथवा मोक्ष का अधिकारी कहलाता है।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
26.2
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।।६९।।

या=जो; **निशा**=रात्रि है; **सर्व**=सब; **भूतानाम्**=जीवों की; **तस्याम्**=उसमें; **जागर्ति**=जागता रहता है; **संयमी**=आत्मसंयमी पुरुष; **यस्याम्**=जिसमें, **जाग्रति**=जागते हैं; **भूतानि**=सब प्राणी; **सा**=वह; **निशा**=रात्रि है; **पश्यतः**=तत्त्व को जानने वाले; **मुनेः**=मुनि के लिए।

अनुवाद

जो सब जीवों की रात्रि है, उसमें आत्मसंयमी जागता है और सब प्राणी जिसमें जागते हैं, तत्त्व को जानने वाले मुनि के लिए वह रात्रि है।।६९।।

तात्पर्य

बुद्धिमान् मनुष्यों की दो कोटियाँ हैं। एक प्रकार के मनुष्य तो इन्द्रियतृप्ति के लिए लौकिक कर्म करने में निपुण होते हैं, जबकि दूसरे आत्मद्रष्टा पुरुष स्वरूप-साक्षात्कार के सेवन में जागृत रहते हैं। अन्तर्द्रष्टा मुनि अथवा मनीषीजनों की क्रियायें विषयियों के लिए रजनी के समान हैं। स्वरूप-साक्षात्कार के सम्बन्ध में अज्ञानी होने के कारण विषयी ऐसी रात्रि में निद्रामग्न रहते हैं। इसके विपरीत, तत्त्वद्रष्टा मुनि विषयी मनुष्यों की रात्रि में जागता है। वह मुनि परमार्थ-विद्या के शनैः-शनैः विकास में लोकोत्तर दिव्य रसास्वादन करता है, जबकि स्वरूप-साक्षात्कार के प्रति निद्रामग्न विषयी नाना प्रकार के इन्द्रियजनित सुखों की मनोकल्पना करता हुआ अपनी सुप्तावस्था में ही कभी सुख और कभी दुःख का अनुभव करता रहता है। मनीषी अन्तर्द्रष्टा इस प्राकृत दुःख-सुख से सदा उदासीन रह कर सांसारिक प्रतिक्रिया से विचलित हुए बिना निरन्तर स्वरूप-साक्षात्कार के साधनों में लगा रहता है।

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
27.2
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।।७०।।